International Journal of Home Science 2020; 6(3): 408-410

International Journal of Home Science

ISSN: 2395-7476
IJHS 2020; 6(3): 408-410
© 2020 IJHS
www.homesciencejournal.com
Received: 22-06-2020
Accepted: 27-07-2020

रंजीता कुमारी
शोध छात्रा, गृह विज्ञान विभाग,
ल. ना. मि. वि., दरभंगा, बिहार,
भारत

Corresponding Author:
रंजीता कुमारी
शोध छात्रा, गृह विज्ञान विभाग,
ल. ना. मि. वि., दरभंगा, बिहार,
भारत

कामकाजी महिलाओं में स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएँ

रंजीता कुमारी

सारांश
भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति सदियों से दयनीय रही है, उनका हर स्तर पर शोषण और अपमान होता रहा है। कामकाजी महिलाओं के जीवन में कई प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष अवरोध आते हैं। गहरे से लैंगिक भेदभाव से लेकर यौन उत्पीड़न तक ऐसे में घबरा कर रेस छोड़ देने के बजाए इन रोड़ों को बहादुरी से हटाते हुए आगे बढ़ने का रवैया रखें। अमेरिकी रिसर्च दिखाते हैं कि पुरुषों को उनकी क्षमता जबकि महिलाओं को उनकी पूर्व उपलब्धियों के आधार पर प्रमोशन मिलते हैं। एक ओर बाहर से रोड़े है तो दूसरी ओर कई महिलाएँ अपने मन की बेड़ियों में कैद होती हैं। समाज की उनसे अपेक्षाओं का बोझ इतना बढ़ जाता है कि वे अपनी उम्मीदें और महात्वाकांक्षाएँ कम कर लेती हैं। आंतरिक प्रेरणा के अलावा अपने आस पास ऐसे प्रेरणादायी लोगों का एक सपोर्ट नेटवर्क बनाए जो मातृत्व, परिवार और कैरियर की तिहरी जिम्मेदारी को निभाने में आपका संबल बने।

प्रस्तावना
महिलाओं को परिवार और समाज में अपना सम्मान पाने के लिए आर्थिक रूप से निर्भर होने की सलाह दी जाती है। प्राचीन काल से मजदूर वर्ग की महिलाएँ अनेक प्रकार के काम काज करती रही हैं, कुछ क्षेत्रों में जैसे घरों, सड़कों इत्यादि की साफ सफाई, कपड़े धोना, नर्सिंग, सिलाई–बुनाई, खेती–बाड़ी सम्बन्धी कार्य इत्यादि में तो इनका एकाधिकार रहा है। अतिशिक्षित परिवारों एवं उच्च शिक्षित परिवारों की महिलाएँ पहले से ही उच्च पदों पर आसीन होकर कामकाज करती रही हैं, जहाँ तक उच्च शिक्षित परिवारों की महिलाओं की बात की जाय तो उन परिवारों में महिलाएँ अपेक्षाकृत हमेशा से ही सम्मान प्राप्त रही हैं। परन्तु मजदूर वर्ग में शिक्षा के अभाव में रूढ़वादी समाज के कारण आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होते हुए भी अपमानित होती रहती थीं और आज भी विशेष बदलाव नहीं हो पाया है। महिलाओं में अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होने और शिक्षित होने के चलते मध्य वर्गीय परिवार की महिलाएँ भी नौकरी, दुकानदारी अर्थात् व्यापार, ब्यूटी पार्लर, डॉक्टर जैसे व्यवसायों में पुरुषों के समान कार्यों को अंजाम देने लगी है। डॉक्टर, वकील, आई. टी., सी. ए. पुलिस जैसे क्षेत्रों में आज महिलाओं की बहुत माँग हैं। परन्तु हमारे समाज का ढांचा कुछ इस प्रकार का है कि महिला को कामकाजी होने के बाद भी नए प्रकार के संघर्ष से झूझना पड़ता है, अब उन्हें अपने कामकाज के साथ–साथ घर की जिम्मेदारी भी यथावत निभानी पड़ती है। उसके लिए उन्हें सवेरे जल्दी उठ कर अपने परिवार अर्थात् बच्चों और परिवार के अन्य सदस्यों के लिए भोजन इत्यादि की व्यवस्था करनी होती है, बच्चों के सभी कार्यों को शीघ्र निबटाना पड़ता है, उसके पश्चात् संध्या समय लौटने के बाद गृह कार्यों में लगना होता है क्योंकि परिवार के पुरुष आज भी घर के कार्यों की जिम्मेदारी सिर्फ घर की महिला की ही मानते हैं। कुछ पुरुष तो कुछ भी सहयोग करने को तैयार नहीं होते, यदि महिला उन पर दबाब बनाती है तो अक्सर पुरुषों को कहते सुना जाता है कि अपनी नौकरी अथवा कामकाज छोड़ कर घर के कार्यों को ठीक से निभाओं, महिला की जिम्मेदारी घर संभालने की होती है। मजबूरन महिला दो पाटन के बीच पिस कर रह जाती है जो महिलायें आर्थिक रूप से सक्षम होती हैं वे अवश्य घर के कार्यों को निबटाने के लिए, बच्चों के कार्यों में सहयोग के लिए आया और कुक की व्यवस्था कर लेती हैं, परन्तु गरीब एवं अल्प मध्य वर्गीय परिवारों की महिलाओं के लिए आज भी यह सब कुछ संभव नहीं है।

भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति सदियों से दयनीय रही है, उनका हर स्तर पर शोषण और अपमान होता रहा है। पुरुष प्रधान समाज होने के कारण सभी नियम, कायदे, कानून पुरुषों के हितों को ध्यान में रख कर बनाये जाते रहे। खेलने और शिक्षा ग्रहण करने की उम्र में बेटियों की शादी कर देना और फिर बाल्यावस्था में ही गर्भ धारण कर लेना, उनके मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य के लिए खतरनाक साबित होता रहा है, महिला को सिर्फ बच्चा पैदा करने की मशीन बना कर रखा गया। परिणाम स्वरूप प्रत्येक महिला अपने जीवन में दस से बारह बच्चों की माँ बन जाती थी

इस प्रक्रिया के कारण उन्हें कभी स्वास्थ्य को ठीक करने के लिए पर्याप्त अवसर नहीं मिलता था। अनेकों बार, कमजोर शरीर के रहते गर्भ धारण के दौरान अथवा प्रसव के दौरान उन्हें अपना जीवन भी गवाना पड़ता था, स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण जीवन अनेक बीमारियों के साथ व्यतीत करना पड़ता था। सदियों तक देश में विदेशी शासन होने के कारण उनकी समस्याओं की कहीं कोई सुनवाई भी नहीं की गई, शिक्षा के अभाव में वे इसे ही अपना नसीब मान कर सहती रहती थी। इसके अतिरिक्त दहेज प्रथा जैसी कुरीतियों के कारण भी महिलाओं को कभी भी सम्मान से नहीं देखा गया। अकसर परिवार में पुत्री के होने को ही अपने दुर्भाग्य की संज्ञा दी जाती रही है। बहू के मायके वालों के साथ अपमान जनक व्यवहार आज भी जारी है। इसी कारण परिवार में लड़की के जन्म को टालने के लिए हर संभव प्रयास किये जाते रहे, जो आज कन्या भ्रूण हत्या के रूप में भयानक रूप ले चुका है। देश को आजादी मिलने के पश्चात् भारतीय संविधान ने महिलाओं के प्रति संवेदना दिखाते हुए, उन्हें पुरुषों के समान अधिकार प्रदान किये और आजाद देश की सरकारों ने महिलाओं के हितों में समय समय पर अनेक कानून बनाये, शिक्षा के प्रचार प्रसार को महत्व दिया गया और बच्चियों को पढ़ने के लिए प्रेरित किया गया इस प्रकार से जनजागरण होने के कारण महिलाओं ने अपने हक को पाने के लिए और पुरुषों द्वारा किये जा रहे अन्याय के विरूद्ध अनेक आन्दोलनों के माध्यम से अपनी आवाज बुलंद की और समाज में पुरुषों के समान अधिकारों की माँग की देश में महिला के हितों के लिए महिला आयोग का गठन किया गया, जो महिलाओं के प्रति होने वाले अन्याय के लिये संघर्ष करती हैं, उनके कल्याण के लिए शासन और प्रशासन से संपर्क कर महिलाओं की समस्याओं का समाधान कराती है।

2012 में प्राप्त आंकड़ों के अनुसार कामकाजी महिलाओं की कुल भागीदारी मात्र 27 प्रतिशत है अर्थात् इतना सब कुछ होने के बाद भी, आज भी महिलाओं की स्थिति में बहुत कुछ सुधार की आवश्यकता है, अभी तो अधिकतर महिलाओं को यह आभास भी नहीं है कि वे शोषण का शिकार हो रही हैं और स्वयं एक अन्य महिला का शोषण करने में पुरुष समाज को सहयोग कर रही है।

बचपन जीवन का एक बहुत ही महत्वपूर्ण भाग है। बालकों के लिए व्यक्तिगत और सामाजिक अनुकूलन के लिए जीवन के कुछ प्रथम वर्ष सबसे अधिक महत्वपूर्ण होते है। पूरे जीवन का ढ़ाँचा शैशव में ही पड़ जाता है। बाल विकास में विशेषकर माता की भूमिका महत्वपूर्ण मानी जाती है। बच्चों के विकास पर माता का सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है। बालक सबसे पहले माता के ही संपर्क में आता है। बाल्यकाल में व्यक्तित्व की अस्थिरता नहीं रहती। इस कारण प्रारम्भिक अवस्था पर माता का प्रभाव जीवन पर्यन्त बना रहता है। माता के व्यवहार पर व्यक्तित्व निर्भर करता है। अगर माता बच्चों के साथ संतुलित व्यवहार करेंगे ता बच्चों के व्यक्तित्व का विकास भी होगा। किसी अबोध बच्चे को मानव समाज और उसकी विशेषताओं का ज्ञान सबसे पहले उसकी माँ से होता है। माँ का महत्व इस दृष्टि से भी है कि शैशवावस्था में बच्चों को सीखाने के लिए सिर्फ उसकी अच्छी बातें या संवाद पर्याप्त नहीं होती है बल्कि उसका ममत्व, वात्सल्य, त्याग और सर्मपण की निःस्वार्थ भावना बच्चों को हर पल उसकी माँ से जोड़े रखता है। इस प्रक्रिया में बच्चों का मानसिक विकास स्वाभाविक रूप से होता है। ज्ञातव्य है कि कामकाजी महिला अपने बच्चों के साथ पर्याप्त समय व्यतीत नहीं कर पाती। इससे उसके बच्चों के व्यक्तित्व विकास नाकारात्मक प्रभाव पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में उनके बच्चे एकाकीपन के शिकार हो जाते है। ऐसे बच्चे सामाजिकरण की प्रक्रिया से अलग–थलग रह जाते है। शहरों में ऐसे एकल परिवार देखे जा सकते है, जहाँ पिता के साथ–माता भी नौकरी करती है। ऐसी माताओं की भूमिका घर में जिम्मेदारियाँ निभाती हैं, लेकिन माँ की अनुपस्थिति और भावनात्मक लगाव की कमी बनी रहती है। जाहिर है बच्चों को शैशवावस्थ और बाल्यकाल में कोई भी चीज सीखाने और उसके व्यक्तित्व को निखारने में माँ का प्यार और उसका भावनात्मक लगाव अत्यंत आवश्यक होता है। यह सिलसिला लगभग 8 से 10 वर्ष तक जारी रहता है। क्योंकि इस दौरान ही बच्चों में आगामी भविष्य के बीज पड़ते हैं, जो बाद में उसकी सफलता के रूप में अंकुरित होते है। यदि बच्चा 3 या 4 की बजाय 6 या 8 वर्ष का हो तो उसे माँ के ममत्व की आवश्यकता होती है। [1]

स्पष्ट है कि भूमिका बच्चों के लालन–पालन तक ही सीमित नहीं होती है। माँ बच्चों की सबसे अच्छी दोस्त होती है जो उसकी हर जरूरत को समझती है तथा उसे पूरा करने के लिए त्याग और समर्पण के लिए सदा तैयार रहती है। चाहे बच्चे की तोतली आवाज को समझकर उसे दूध पिलाने की बात हो या फिर उसकी अन्य जरूरत। माँ ही बच्चों के मनोविज्ञान को बेहतर ढ़ंग से समझ पाती है। इसी कारण बाल विकास में माँ की भूमिका महत्वपूर्ण होती है।

रोजगार के हर क्षेत्र में महिलाऐं पुरूषों का वर्चस्व तोड़ रही हैं। खासकर व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त महिलाओं के काम का दायरा बहुत बढ़ा है। लेकिन कामयाबी के बावजूद परिवार से जो सहयोग उन्हें मिलना चाहिए, वह नहीं मिल रहा है। आज के दौर में महिलाऐं शिक्षा, पत्रकारिता, कानून, चिकित्सा या इंजीनियरिंग के क्षेत्र में उल्लेखनीय सेवाऐं दे रही हैं। पुलिस और सेना में भी वे जिम्मेदारी निभा रही है, पर ज्यादातर महिलाओं को पेशेवर जिम्मेदारियों के साथ ही घर की जिम्मेदारी भी उठानी पड़ती है। जिसका उनके स्वास्थ्य पर विपरीत असर पड़ता है।

बदलते वक्त ने महिलाओं को आर्थिक, शैक्षिक और सामाजिक रूप से सशक्त किया है और उनकी हैसियत एवं सम्मान में वृद्धि हुई है। इसके बावजूद अगर कुछ नहीं बदला तो वह है महिलाओं की घरेलू जिम्मेदारी, खाना बनाना और बच्चों की देखभाल अभी भी महिलाओं का ही काम माना जाता है। यानी अब महिलाओं को दोहरी जिम्मेदारी निभानी पड़ रही है। घरेलू महिलाओं की तुलना में कामकाजी महिलाओं पर काम का बोझ ज्यादा है। इन महिलाओं को अपने कार्यक्षेत्र और घर, दोनों को संभालने के लिए ज्यादा मेहनत करनी पड़ रही है। कारोबारी संगठन एसोचैम द्वारा किए गए एक सर्वे से पता चलता है कि मां बनने के बाद कई महिलाऐं नौकरी छोड़ देती हैं। सर्वे के मुताबिक 40 प्रतिशत महिलाऐं अपने बच्चों को पालने के लिए यह फैसला लेती हैं। [2] प्रोफेसर अर्चना सिंह कहती हैं कि कामकाजी महिलाओं की स्थिति 'दो नावों में सवार' व्यक्ति के समान होती है क्योंकि एक ओर उसे 'ऑक्यूपेशनल स्ट्रेस' या कामकाज का तनाव झेलना पड़ता है तो दूसरी ओर उसे घरेलू मोर्चे पर भी परिवार को खुश रखने के जिम्मेदारी को निभाना पड़ता है।

ऑफिस और घर संभालने की दोहरी जिम्मेदारी के कारण तनाव बढ़ता है और बीमारियां पैदा होती है। अपनी जिम्मेदारियों को पूरा करने के चक्कर में महिलाऐं अक्सर अपनी सेहत को नजरअंदाज करती हैं। एसोचैम के सर्वे के अनुसार 78 फीसदी कामकाजी महिलाओं को कोई न कोई लाइफस्टाइल डिसॉर्डर है। 42 फीसदी को पीठ दर्द, मोटापा, अवसाद, मधुमेह, उच्च रक्तचाप की शिकायत हैं। इसी सर्वे के अनुसार कामकाजी महिलाओं में दिल की बीमारी का जोखिम भी तेजी से बढ़ रहा है। 60 प्रतिशत महिलाओं को 35 साल की उम्र तक मधुमेह की बीमारी होने का खतरा है। [3] 32 से 58 वर्ष उम्र की महिलाओं के बीच हुए इस सर्वे के अनुसार 83 प्रतिशत महिलाऐं किसी तरह का व्यायाम नहीं करती और 57 फीसदी महिलाऐं खाने में फल–सब्जी का कम उपयोग करती हैं।

सिर्फ लाइफस्टायल डिसॉर्डर ही नहीं बल्कि कामकाजी महिलाऐं अन्य बीमारियों की चपेट में जल्दी आ जाती हैं। सेहत के प्रति लापरवाही भी इसके लिए जिम्मेदार हैं। ''खुद के सेहत के लिए समय निकाल पाना मुश्किल है। खासतौर पर जब सास ससुर भी साथ रहते हैं।'' डॉ. दिशा शुक्ला के अनुसार देश में महिलाओं में पॉलीसिस्टिस ओवेरिन सिंड्रोम यानी पीसीओएस की शिकायतें भी बढ़ रही हैं। यह समस्या कामकाजी महिलाओं में ज्यादा पायी जाती है। वे कहती हैं कि पीसीओएस से ग्रस्त हो जाने पर मरीज

बार–बार बीमार पड़ता है। इससे महिलाओं में इनफर्टिलिटी की समस्या भी उत्पन्न हो जाती है।

दोहरी जिम्मेदारीयों की बोझ के चलते तनाव एवं अन्य स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं से घिर चुकी महिलाओं को अब अपने लिए समय निकालने की जरूरत है। अपनी स्थिति के लिए कुछ हद तक महिला खुद जिम्मेदार है। खाना बनाने से लककर बच्चों की परवरिश को वह अपनी प्राथमिकता मानती है। [4] इस सोच में बदलाव जरूरी है। जिन घरों में पति या अन्य परिजन कामकाज में हाथ बंटाते हैं वहां महिलाओं का स्वास्थ अपेक्षाकृत बेहतर पाया जाता है। स्वस्थ महिला, स्वस्थ परिवार और स्वस्थ समाज का निर्माण करती है इसलिए महिलाओं को तनाव मुक्त और काम के बोझ से मुक्त रखना परिवार की जिम्मेदारी है।

अध्ययन से पता चला है कि हमारे यहां की कामकाजी महिलाऐं स्वास्थ्य के हर संकेतक के लिहाज से प्रभावित हैं। वैसे अब ग्रामीण महिलाऐं भी मधुमेह जैसे खतरे से बाहर नहीं रहीं।

भारत में मध्यवर्ग की कामकाजी महिलाओं में मधुमेह के मामले बढ़ रहे हैं। ग्रामीण इलाके की महिलाओं में यह प्रवृत्ति कम है। इसके अलावा कॉर्पोरेट क्षेत्र में महिलाओं के मुकाबले पुरूषों में मधुमेह के ज्यादा मामले सामने आ रहे हैं। ताजा अध्ययन में इसका खुलासा हुआ है। वर्ष 2015 में देश में मधुमेह के 6.91 करोड़ मरीज थे। अगले पंद्रह वर्षों में यह आंकड़ा बढ़कर 11 करोड़ तक पहुंचने का अंदेशा है।

हाल में हुए एक अध्ययन से पता चला है कि शहरी महिलाओं में मधुमेह के बढ़ते मामलों के चलते उनको तरह–तरह की बीमारियों का सामना करना पड़ रहा है। इससे उनकी मृत्युदर भी बढ़ी है। [5] मध्यवर्ग की कामकाजी महिलाओं में से जहां 17.7 फीसदी इस बीमारी की चपेट में हैं, वहीं ग्रामीण इलाके में यह आंकड़ा 10 फीसदी है।

अध्ययन से साफ है कि कामकाजी महिलाऐं स्वास्थ्य के हर संकेतक के लिहाज से प्रभावित हैं। वैसे, ग्रामीण इलाके की महिलाओं के लिए भी अब खतरे की घंटी बजने लगी है। इन इलाकों में 22.5 फीसदी महिलाऐं मधुमेह की शिकार हैं। लेकिन शहरी कामकाजी महिलाओं में यह आंकड़ा 45.6 फीसदी है।

''चालीस पार वाले लोगों में मधुमेह का खतरा पहले के मुकाबले तेजी से बढ़ा है।'' कॉर्पोरेट क्षेत्र में सीनियर मैनेजमेंट के स्तर पर पहुंच जाने की वजह से इस उम्र में काम का दबाव काफी बढ़ जाता है। इससे तनाव बढ़ता है जो मधुमेह को न्योता देता है।

साइलेंट किलर कहे जाने वाले मधुमेह के मरीजों की तादाद देश में तेजी से बढ़ रही है। इस बीमारी के मामले में गुजरात का पहला स्थान है। मधुमेह के चलते फिलहाल लगभग पौने दो करोड़ लोग किडनी की बीमारी से जूझ रहे हैं। [6] बीते साल यानी 2015 में देश में इस बीमारी की वजह से पैदा होने वाली जटिलताओं के चलते 1.28 लाख वयस्कों की मौत हो गई। ''ग्रामीण इलाकों के मुकाबले शहरी इलाकों में रहने वाले लोगों में मधुमेह के मामले छह गुना ज्यादा है।'' वह कहते हैं कि मधुमेह की वजह से कॉर्पोरेट क्षेत्र में लोगों की उत्पादकता प्रभावित हो रही है और उनके जीवन का स्तर खराब हो रहा है। [7]

निष्कर्ष

''शहरी जीवन में भागदौड़ के चलते लोगों की जीवनशैली तेजी से बदली है। उनके पास न तो खाने का समय है और न ही शारीरिक कसरत का। इसके अलावा फास्ट फूड का बढ़ता प्रचलन लोगों को इस बीमारी के मुंह में धकेल रहा है।'' कोई भी व्यक्ति शुरूआत में इस बीमारी का गंभीरता से नहीं लेता। बाद में इसकी वजह से दूरी जटिलताऐं सामने आने पर लोग सचेत होते हैं। लेकिन तब तक देर हो चुकी होती है। अनियंत्रित मधुमेह की वजह से किडनी, आंखों और दिल की बीमारियां हो सकती है। ''शहरी इलाकों में खासकर महिलाओं को दोतरफा दबाव झेलना पड़ता है। उनको घर भी संभालना होता है और दूसरी तरफ दफ्तर में तनाव व काम के बोझ से भी जूझना पड़ता है।'' वह कहती हैं कि ऐसी महिलाओं के पास शारीरिक कसरत का भी समय नहीं होता। व्यस्तता और काम के बोझ से वह नियमित रूप से स्वास्थ्य की जांच नहीं करा पातीं। इसी वजह से ऐसी महिलाओं में मधुमेह के मामले ज्यादा सामने आ रहे हैं। विशेषज्ञों का कहना है कि थोड़ी–सी जागरूकता बरतने पर इस जानलेवा बीमारी पर काफी हद तक अंकुश लगाया जा सकता है। जीवनशैली और खान–पान की आदतों में मामूली बदलाव से लाखों जिंदगियाँ बच सकती हैं। इसके लिए सरकार और स्वास्थ्य के क्षेत्र में सक्रिय गैर–सरकारी संगठनों को मिल कर एक जागरूकता अभियान चलाना होगा ताकि लोग समय रहते इस बीमारी की गंभीरता को समझ कर इससे बचाव कर सकें। वह कहते हैं कि इस बीमारी की चपेट में आने के बाद मामूली संयम भी लोगों की उम्र बढ़ा सकता है।

संदर्भ

1. टर्नर, डी. एफ., 1959, हैण्ड बुक ऑफ डायट थैरेपी, तृतीय संस्करण, शिकागो यूनीवर्सिटी प्रेस, शिकागो
2. मुदाम्बी, एस. आर. एवं राजगोपाल, एम. भी., 1980, फंडामेण्टलस ऑफ फूड्स एण्ड न्यूट्रीशन, विली–ईसट्रन लि.
3. गूयेट्जकोप, एच. एस. और पी. एच. बाटमैन, 1946, मेन एण्ड हंगर, ब्रदर्न पब्लिशिंग हाउस, एलीगण, इलिनोएस
4. देवकी जैन एंड चांद मलानी, 1982, रिपोर्ट आन ए टाईम ऐलोकेशन स्टडी ईट्स मेथोडोलिजिकल इंप्लीकेशन इंस्टीच्यूट ऑफ सोशल स्टडीज ट्रस्ट।
5. आब्जरवेशंस कंटेन्ड इन कमीशंस टूर रिपोर्ट एंड निर्मला बनर्जीस स्टडी; विमेन वर्कर्स इन अन और गनाईज्ड सेक्टर, 1981, संगम प्रकाशन पर आधारित।
6. एस. एस. मेहता; टेक्नौलोजी फार कौमन मैंन इन इंफोरमल सेक्टर, सम ईश्यूज, गांधी लेबर इंस्टीट्यूट।
7. यू कल्पगम, 1987, विमेन इन लेबर फोर्स ऐनेएलिसीस आफ एन. एस. एस. डेटा मद्रास इंस्टीच्यूट फॉर डिवेलपमेंट स्टडीज मद्रास/एन.सी.ई. डब्ल्यू।